SAMVAD E-JOURNAL
ISSN (Online) : 2583-8334
(International Peer-Reviewed Refereed Journal)
Volume 3, Issue-2, January to March : 2025
Published by Rangmati Publication http://www.rangmatipublication.com/

दलित लेखन का साहित्यिक महत्त्व और उसकी प्रासंगिकता का प्रश्न

डॉ. जगदीश (सहायक आचार्य, हिंदी)

सारांश :
दलित साहित्य ने हिंदी और अन्य भारतीय भाषाओं क्षेत्रगत और भावगत विस्तार में ही भूमिका निभाई है। हिंदी में लिखे गए दलित साहित्य का अनेक देशी-विदेशी भाषाओं में अनुवाद हुआ। हिंदी में अनेक देशज शब्दों का प्रवेश करवाया तथा एक पिछड़े तबके को उसकी भाषा होने का अहसास दिलवाना भी कम महत्त्वपूर्ण नहीं है। दलित साहित्य केवल कागज तक सीमित नहीं होकर एक आंदोलन का साहित्य है जिसका उद्देश्य मानव- मात्र में समता स्थापित करना है। दलित साहित्य के समक्ष वर्तमान समय में अनेक चुनौतियाँ भी है। दलित साहित्य को क्रिया की आक्रोशपरक प्रतिक्रिया कहें तो असंगत नहीं होगा। किसी भी प्रतिक्रिया का आवेग अधिक होता है किन्तु स्थायित्व, व्यापकता और गहराई कम होती है। समय के साथ-साथ दलित साहित्य में भावों और विचारों की पुनरावृति दिखाई देती जो कि सृजनात्मकता में बाधक है। यह साहित्य दलित समाज में व्याप्त आंतरिक भेदभाव और शोषण, आरक्षण जैसी व्यवस्था के असमान वितरण और विसंगतियों इत्यादि महत्वपूर्ण मुद्दों पर मौन है। दलित साहित्य के समक्ष समावेशी और व्यापक भाव विस्तार की चुनौतियाँ भी है।

दलित साहित्य का आविर्भाव कोई अनायास होने वाली घटना नहीं है बल्कि इसके उदय के कारण सदियों से चली आ रही शोषणकारी सामाजिक व्यवस्था में छिपे है। जिस घटना के कारण का इतिहास इतना पुराना और बर्बर रहा हो, उसके आविर्भाव के अपने मायने व उद्देश्य होते हैं। दलित साहित्य उस क्रूर अतीत को भूलाना नहीं चाहता क्योंकि वर्तमान और भविष्य को सुधारने के लिए इतिहास का उचित ज्ञान आवश्यक है। यह शोषणयुक्त अतीत दलित समाज को उस व्यवस्था से लड़ने के लिए प्रेरित करता है, साथ ही अतीत की भूलों को नहीं दोहराने के लिए सचेत भी करता है।

दलित लेखन की साहित्यिक महत्ता को जानने के लिए इसके उदय के कारणों को समझना जरुरी है क्योंकि ये कारण ही उसके स्वरूप को तय करते हैं। दलित साहित्य 'स्वान्तः सुखाय' के लिए अपने भावों का उद्‌गार करने वाला साहित्य नहीं है बल्कि इस साहित्य का मकसद समाज के रग-रग में दौड़ने वाले जाति व वर्ण आधारित भेदभाव को समाप्त करके समतामूलक, मानवीय और गरिमा युक्त समाज की स्थापना करना है। दलित साहित्य की लड़ाई उस व्यवस्था से है, जिसमें जन्म के आधार पर एक मनुष्य को दूसरे से निम्न व हेय समझा जाता है। इस व्यवस्था में समाज को चार वर्णों में विभक्त किया तथा सबसे निम्न कोटि में शूद्र वर्ण को रखा। शूद्र वर्ण को शिक्षा का अधिकार नहीं था। ज्ञान-विज्ञान से इस वर्ण को दूर रखने के लिए आमजन की भाषा से इतर शास्त्रों की विशेष भाषा स्वीकार की गई। शूद्र समाज को ऐसे कार्यों को करने के लिए मजबूर किया जाता जो अत्यंत दुष्कर और हेय समझे जाते है। **'मेरे पुरखे'** कविता में ओमप्रकाश वाल्मीकि कहते है-

"तुमने कहा

सेवा ही धर्म है शूद्र का

उन्होंने नहीं पूछा

बदले में क्या दोगे।" 1

आजादी के बाद दलित समाज को संवैधानिक और कानूनी अधिकार दिए गए। इसकी बदौलत आजादी के बाद के वर्षों में दलित समाज में शिक्षा से उनमें अधिकारों के प्रति जागरूकता आई तथा उन्हें अपने समाज को भी जागरूक करने के लिए नैतिक रूप से प्रेरित किया। इस पढ़े-लिखे दलित वर्ग ने इस व्यवस्था से लड़ने के लिए कलम को अपना हथियार बनाया तथा बुद्ध के शांति पथ का चुनाव किया। इन दलित लेखकों ने साहित्य में 'भोगे हुए यथार्थ' को महत्त्व दिया न कि पारम्परिक साहित्यकार की तरह काल्पनिक उड़ान को। इस भोगे हुए यथार्थ पर आधारित साहित्य ने तथाकथित उच्च वर्णों के अमानवीय चेहरे को दिखाया, यही दलित साहित्य है।

इस साहित्य को शुरुआती दौर में तथाकथित मुख्यधारा के साहित्य चिंतकों ने शिल्प व भाषा की उत्कृष्टता का अभाव बताकर साहित्य की कोटि से बाहर करने का प्रयास किया किंतु आक्रोश की धधकती ज्वाला उनके षड्यंत्रों पर भारी पड़ी। दलित साहित्य लेखकों के जीवनानुभव से निकला साहित्य है, जिसमें उनकी पीड़ा व्यक्तिगत होकर भी सामाजिक है क्योंकि उनकी पीड़ा का कारण सामाजिक परिस्थितियों में है। समाज के तथाकथित निम्न तबके में इस साहित्य को लेकर विशेष लगाव देखने को मिला है क्योंकि वे उस पीड़ा में अपनी पीड़ा आसानी से ढूंढ पा रहे हैं। यह पीड़ा दलित समाज में सैंकड़ों पीढ़ियों से हृदय के किसी कोने में दबाकर रखी थी क्योंकि जातिवादी व्यवस्था में उनके पास अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता नहीं थी। दलित साहित्य ने निम्न कहे जाने वाले समाज को आत्मसाक्षात्कार करवाया। यही आत्मसाक्षात्कार उन्हें सामाजिक परिवर्तन के लिए प्रेरित करता है तथा समतामूलक समाज के लक्ष्य की ओर प्रेरित करता है।

दलित साहित्य लेखन के माध्यम से जो लड़ाई लड़ी जा रही है, वह केवल दलित वर्ग की लड़ाई नहीं है बल्कि सम्पूर्ण मानवता की लड़ाई है क्योंकि यह शोषणकारी व्यवस्था मानव जाति को शर्मसार करती है। यह लेखन उन तमाम हथकण्डों, पाखण्डों व तरकीबों से नकाब हटाता है तथा तर्क की कसौटी पर कसकर सदियों से सोना कही जानी वाली रूढ़ियों व अंधविश्वासों के जाल को पीतल कह कर खारिज करता है। इस जालसाजी की शिकार अनेक पीढ़ियाँ हुई है। ये साहित्यकार धर्मशास्त्रों को चुनौती देते हुए इनको पूरी तरह नकारते हैं क्योंकि ये धर्मशास्त्र शोषण का प्रमुख माध्यम रहे हैं। शास्त्रों को सार्वभौमिक व अटल सत्य बताकर इन्हें स्वार्थ सिद्धि व भेदभाव के साधन के रूप में प्रयोग किया।

इस मेहनतकश वर्ग ने समाज के विकास में अपना पसीना बहाया लेकिन उन्हें बदले में घृणा व हिकारत के अलावा कुछ नहीं मिला। 'इतिहास विजेताओं का होता है' की तर्ज पर इस वर्ग को इतिहास के पन्नों से भी दरकिनार किया और कहीं जगह मिली तो भी गलत रूप में। दलित साहित्य ने अपने विस्मृत इतिहास को खंगालने व पुनर्निर्मित करने का कार्य किया। वर्तमान में इस साहित्य ने अपनी उपस्थिति को पुरजोर ढंग से दर्ज करवाया है, जो कि कल का इतिहास होगा। इतिहास में दर्ज नहीं होने का यह मतलब कतई नहीं है कि इस वर्ग का कोई इतिहास नहीं है। जो इतिहास लिखा गया है वह सही हो, यह भी आवश्यक नहीं है। इतिहास में तथ्यों व घटनाओं का चुनाव तथा उसकी व्याख्या इतिहासकार की मंशा पर निर्भर रहती है।

दलित साहित्य ने साहित्य की परिधि को और अधिक व्यापक बनाया। साहित्य को समाज का दर्पण तो कह दिया गया किंतु समाज की परिधि अत्यंत संकीर्ण थी। दलित साहित्य ने आत्मकथा जैसी व्यक्तिवादी कही जाने वाली विधा को सामाजिक बनाया। इससे पहले आत्मकथा लेखक के निजी जीवन के सफेद-स्याह पक्षों को उभारने वाली विधा के रूप में जानी जाती थी लेकिन दलित आत्मकथाएँ उन परंपरागत चुलबुले प्रसंगों की जगह घोर यातना व

संघर्ष के प्रसंगों से भरी है। यह प्रताड़ना लेखक का निजी दुख नहीं होकर उस समाज का दुख है, जो इस जन्म आधारित भेदभाव का शिकार रहा है।

दलित साहित्य के शिल्पगत पक्षों पर तथाकथित मुख्यधारा के साहित्यकारों द्वारा सवाल उठाए जाते हैं। मुख्यधारा कहे जाने वाले साहित्य के शिल्प-सौंदर्य का आधार संस्कृत साहित्य परंपरा है। दलित समाज को देववाणी कही जाने वाली इस भाषा से अलग- थलग रखा गया। दलित साहित्य में सपाट बयानी और यथार्थ की नकल का आरोप भी लगाया जाता रहा है। 'कला कला के लिए' या 'कला जीवन के लिए' की इस बहस में हस्तक्षेप करते हुए ओमप्रकाश वाल्मीकि ने सिरे से खारिज करते हुए कहा है- **"दलित साहित्य में दलित जीवन का यथार्थवादी चित्रण यथार्थ की मात्र नकल नहीं है बल्कि साधारण परिस्थितियों में साधारण चरित्रों का वास्तविक पुनःसर्जन है।" 2**

यह बात ठीक है कि दलित साहित्य आक्रोश का साहित्य है किंतु कई प्रसिद्ध दलित विमर्शकारों ने भी हिन्दू धर्मशास्त्रों और सवर्ण समाज पर भड़ास निकालते हुए अत्यंत अशोभनीय,अश्लील और गालीसूचक भाषा का प्रयोग किया।ऐसी भाषा इस साहित्य आंदोलन को नैतिकता के धरातल पर कमजोर करती है।

दलित साहित्य ने हिंदी और अन्य भारतीय भाषाओं क्षेत्रगत और भावगत विस्तार में ही भूमिका निभाई है। हिंदी में लिखे गए दलित साहित्य का अनेक देशी-विदेशी भाषाओं में अनुवाद हुआ। हिंदी में अनेक देशज शब्दों का प्रवेश करवाया तथा एक पिछड़े तबके को उसकी भाषा होने का अहसास दिलवाना भी कम महत्त्वपूर्ण नहीं है। दलित साहित्य केवल कागज तक सीमित नहीं होकर एक आंदोलन का साहित्य है जिसका उद्देश्य मानव- मात्र में समता स्थापित करना है। प्रो. तुलसीराम जी के शब्दों में कहें तो भारत जैसे जातिवादी सामाजिक व्यवस्था वाले देश में दलित साहित्य लंबे समय तक प्रासंगिक बना रहेगा क्योंकि शताब्दियों से जड़ें जमा चुकी इस व्यवस्था को उखाड़ने में समय लगेगा, जब तक इस शोषणकारी अमानवीय व्यवस्था का पूरी तरह दमन नहीं हो जाता तब तक दलित साहित्य समाज में आंदोलनकारी साहित्य बना रहेगा।

दलित साहित्य के समक्ष वर्तमान समय में अनेक चुनौतियाँ भी है। दलित साहित्य को क्रिया की आक्रोशपरक प्रतिक्रिया कहें तो असंगत नहीं होगा। किसी भी प्रतिक्रिया का आवेग अधिक होता है किन्तु स्थायित्व, व्यापकता और गहराई कम होती है। समय के साथ-साथ दलित साहित्य में भावों और विचारों की पुनरावृति दिखाई देती जो कि सृजनात्मकता में बाधक है। यह साहित्य दलित समाज में व्याप्त आंतरिक भेदभाव और शोषण, आरक्षण जैसी व्यवस्था के असमान वितरण और विसंगतियों इत्यादि महत्वपूर्ण मुद्दों पर मौन है। दलित साहित्य के समक्ष समावेशी और व्यापक भाव विस्तार की चुनौतियाँ भी है।

संदर्भ ग्रंथ

1. **दलित निर्वासित कविताएं – कँवल भारती (संपादक), इतिहास बोध प्रकाशन, पृष्ठ संख्या 65**
2. **दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र - ओमप्रकाश वाल्मीकि, राधाकृष्ण प्रकाशन,नई दिल्ली; संस्करण 2013, पृष्ठ संख्या 59**